शंकर शेष के 'मूर्तिकार' नाटक में नारी पात्रों का चित्रण

प्रमिला कुमारी, शोधार्थी हिन्दी विभाग एनआईआईएलएम विश्वविद्यालय, कैथल

डा0 रामपाल सिंह ढाण्डा, निर्देशक हिन्दी विभाग एनआईआईएलएम विश्वविद्यालय, कैथल

प्रस्तावना

नर तथा नारी एक दूसरे के पूरक हैं। इन दोनों के सामंजस्य से ही परिवार बनते हैं तथा इन परिवारों का समूह समाज नाम से अभिहित किया जाता है। जब समाज की मूल संरचना का अध्ययन अपेक्षित हो, तो नर तथा नारी के सम्बंधों की संरचना का अध्ययन अपरिहार्य हो जाता है। प्रत्येक विधा के साहित्कार की नर तथा नारी के प्रति विचारधारा या दृष्टिकोण भिन्न–भिन्न होता है। शंकर शेष भारतीय नाट्य–साहित्य के मुर्धुन्य साहित्कार थे। उन्होंने अपने नाटकों में भारतीय नारी के आदर्श–स्वरूप का चित्रण करने के साथ, दैनिक पारिवारिक आवश्यकताओं की भट्टी की अग्न में तपती हुई तथा निरन्तर शोषण की चक्की में पीसती हुई नारी का चित्रण भी किया है।

शंकर शेष ने 'मूर्तिकार' नाटक में केवल दो नारी पात्रों का चित्रण किया है– ललिता तथा नीलू। शेखर इस नाटक का नायक है, जो पेशे से मूर्तिकार है। ललिता शेखर की पत्नी है तथा नीलू शेखर की बहन है। नाटक की सम्पूर्ण कथावस्तु की कसौटी का निकष यह है कि इन दो पात्रों के चित्रण द्वारा ही शंकर शेष ने नारी हृदय की समस्त भाव–राशि को प्रेक्षकों या पाठकों के समक्ष खोलने में सफलता मिल पाई है।

शेखर की बहन नीलू सतीश नामक करोड़पति के लड़के से प्रेम करती है। सतीश उनकी गरीबी का फायदा उठाता है तथा उसे शादी का झांसा भी देता है। यह भोली–भाली नीलू को अपनी लच्छेदार बातों में उलझा लेता है–

नीलू –क्या तुम सचमुच मुझसे प्रेम करते हो, या केवल मेरे रूप से प्रेम करते हो?

सतीश – नीलू, यदि केवल मुझे तुम्हारे रूप से प्रेम होता तो, मुझे इतनी बड़ी–बड़ी भूमिका बनाने की क्या जरूरत थी। रूप बाजारों में भी खरीदा जा सकता है– सब कुछ खरीदा जा

सकता है। पर किसी का मन नहीं खरीदा जा सकता। तुम्हारा तन जितना सुन्दर है, उतना ही सुन्दर मन भी है और इसलिए मैं तुमसे प्रेम करता हूँ नीलू।[1]

शंकर शेष ने यहाँ नीलू के माध्यम से स्त्री विषयक उस भावना का उल्लेख किया है, जिसमें वह सच्चे एवं पवित्र प्रेम को प्राप्त करना चाहती है। नारी की सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि उसे एक पवित्र–प्रेम का उपासक प्रेमी या पति मिले, जो उसके तन से नहीं अपितु मन से प्रेम करे। परन्तु अधिकांशतः यही होता है कि मन छूट जाता है तथा केवल 'तन' शेष रह जाता है। नीलू के साथ भी यही होता है। वह सच्चे प्रेमी की खोज में निकल तो जाती है, परन्तु प्रेम की यात्रा का परिणाम बड़ा घातक निकलता है। सतीश नीलू के साथ दिखावटी प्रेम करता था। वह नीलू के साथ व्याभिचार करके उसे गर्भवती कर देता है। जब नीलू सतीश का प्रत्युत्तर सुनती है तो उसके पैरों तले की जमीन खिसक जाती है–

शेखर–(चिढ़कर) तो नीलू का क्या होगा? मैं पूछता हूँ उस लड़की का क्या होगा। वह कहाँ–कहाँ तुम्हारा पाप ढोती रहेगी। यह तुमने कभी सोचा है कि नीलू का विवाह तुमसे नहीं हुआ, तो उसका जीवन नरक बन जाएगा। सतीश तुम्हें नीलू से ब्याह करना पड़ेगा।

सतीशः–(व्यंग्य से हँसते हुए) कोई जबरदस्ती है। मैं कहता हूँ नीलू से ब्याह नहीं कर सकता। औरत को सदैव मैंने एक खिलौना समझा है। जब तक इच्छा होती है, उससे खेलता हूँ..... बाद में वह टूट भी जाए, तो मैं उसकी परवाह नहीं करता। आप मेरी बदनामी ही तो करेंगें न। शौक से करिए। मैं यदि बदनामी से डरता तो ऐसे काम ही क्यों करता।[2]

शेखर की पत्नी गरीबी के पहाड़ के नीचे दबी है। वह किराए के मकान में रहती है। जब शेखर मकान का किराया नहीं चुका पाता, तो सेठ अपने मुंशी को भेजकर उसके 'शरीर' की ही मांग करते हैं। परन्तु ललिता मुंशी के मुँह पर एक तमाचा जड़कर अपने पतिव्रता धर्म का पालन करती है–

ललिताः (पूरा हाथ उठाकर उसके गालों पर जोरों का एक चांटा मारती है) तो यह ले नरक के कीड़े! जा अपने मालिक से कह दे कि ललिता ने मेरे गाल पर ये निशान भेजें हैं। नीच! तू मुझे पैसे से खरीदना चाहता है। तू हमारी गरीबी का फायदा उठाना चाहता है..... तो जा अपने मालिक से कह दे, कि दुनिया भर का पूरा सोना इकट्ठा करके भी ललिता के नख को नहीं

छुआ जा सकता। जा अपने सेठ को भेज दे। उसके गालों पर भी पाँचों उँगुलियों के निशान बनाकर उसके पापों का इतिहास न लिख दिया, तो मेरा नाम ललिता नहीं।[3]

नारी की सबसे बड़ी अभिलाषा यह होती है कि उसके परिवार में सुख–शांति रहे तथा उसका घर सुख–समृद्धि से परिपूर्ण हो। शेखर की पत्नी ललिता भी इसी भावना से ओत–प्रोत है। शेखर निरन्तर मूर्ति–निर्माण के कार्य में व्यस्त रहता है, तो वह अपने पत्नी को उचित समय नहीं दे पाता। ललिता शेखर की मूर्ति कला की साधना में बाधा तो नहीं बनना चाहती, परन्तु घर की आवश्यकता की पूर्ति हेतु वह शेखर से झगड़ भी पड़ती है–

शेखरः– यह मूर्ति मुझे अमर बना देगी। मैं तो मानवीय मुद्राओं की नई व्याख्या कर रहा हूँ।

ललिताः– अमर बनने के लिए क्या कुछ दिन जीना जरूरी नहीं है। घर में तो दाना नहीं है। क्या मिट्टी के ढेले खाकर मूर्तियाँ बनाओगे?

शेखर :– (थोड़ा क्रोधित होकर) फिर वही बात। दिन–रात खाने–पीने की बात। ललिता तुम औरत न होकर गेहूँ का कीड़ा होती तो अच्छा होता। मैं सौंदर्य और कला की बात छेड़ता हूँ, तुम अपना महाभारत खड़ा करती हो।

ललिताः– मैं महाभारत खड़ा कर रही हूँ। तुम्हारी जिद ही तो महाभारत करती है। फिर तुम केवल चित्रकार या मूर्तिकार ही नहीं हो, तुम गृहस्थ भी हो। तुम्हारी पत्नी है। तुम्हारी जवान अविवाहित बहन है, इसके साथ रोज–रोज की जरूरतें हैं।[4]

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि नारी विषयक जो भाव इस 'मूर्तिकार' नाटक में चित्रित किए गए हैं, वे सभी भाव नारी के हृदय के शाश्वत भाव हैं। घर की जरूरतों को पूर्ण करने में स्त्री स्वयं को खपा देती है। परन्तु यदि फिर भी घर की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती, तो वह थोड़ा मुँहफट होकर अपने पति से प्रत्युत्तर भी करती है तथा तर्क भी करती है। शेखर की पत्नी के माध्यम से इन्हीं भावों को उकेरा गया हैं स्त्री एक सच्चे प्रेमी का सम्पूर्ण समर्पण चाहती है। वह चाहती है कि उसका पति या प्रेमी उसके तन या धन से प्रेम न करके उसके 'मन' से प्रेम करे। परन्तु भौतिकतावाद के प्रचंड झंझावत में ये सभी मानवीय भाव उड़न–छू हो चुके हैं। स्त्री के सच्चे प्रेम की तलाश सिर्फ तलाश ही बनी रती है। शेखर की बहन नीलू प्रेम की मंजिल को प्राप्त करना चाहती थी, किन्तु इस मंजिल के रास्तें में ही उसके स्वप्न

धराशायी हो जाते हैं। वस्तुतः स्त्री मन की जितनी ग्रंथियाँ होती हैं, उन सभी ग्रंथियों को इस नाटक में उद्घटित किया गया है।

संदर्भ–ग्रंथ–सूची

1. शेष, शंकर, मूर्तिकार, शंकर शेष समग्र नाटक, भाग–3, (सम्पादक–हेमन्त कुकरेती), किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ०–36–37
2. वही– पृ०– 76
3. वही– पृ०– 43
4. वही– पृ०– 31